International Journal of Jyotish Research: 2017; 2(2): 21-22

International Journal of Jyotish Research
(वेदचक्षु)

ISSN: 2456-4427
Impact Factor: RJIF: 5.11
Jyotish 2017; 2(2): 21-22
© 2017 Jyotish
www.jyotishajournal.com
Received: 18-05-2017
Accepted: 19-06-2017

सतीश
संस्कृत विभाग, दिल्ली
विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Correspondence
सतीश
संस्कृत विभाग, दिल्ली
विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

वेदों का अपौरूषेयत्व एवं महर्षि दयानन्द

सतीश

प्रस्तावना
प्राचीन काल से ही ट्टषि–मुनियों का यह मन्तव्य है कि वेद पुरुषकृत नहीं है ;अपौरुषेय हैद्ध या ईश्वरकृत हैं। अपौरुषेय शब्द ही व्यापक अर्थ को अवगत कराने वाला है। अपौरुषेयता का अर्थ है– पुरुष=मानव की कृति न होना। इस विषय में मुख्यतः दो तरह की विचारधराएँ दिखलाई देती हैं, एक तो मीमांसकों की विचारधरा है, जिनके अनुसार वेद अनादि हैं एवं नित्य हैं। जो सदा इसी रूप में विद्यमान रहते हैं।[1] इस विचारधरा के अनुसार यदि विचार किया जाये तो यह सृष्टि ही अनादि है, जो प्रवाह से नहीं, स्वरूप से, तथा जिसमें कभी प्रलय नहीं होता। अतः वेद भी अनादिकाल से इसी रूप में है एवं इसी रूप में रहेंगे।[2] दूसरी विचारधरा के अनुसार सृष्टि प्रलय यथाकाल हुआ करते हैं। प्रत्येक सृष्टि के आदि में ईश्वर का उपदेश करता है, किन्तु वह उपदेश एक समान ही होता है[3] क्योंकि ईश्वर का ज्ञान एक रस है जो नित्य है।
वेदों की रचना मं अपौरुषेयत्व को मानने पर ईश्वरकृत होने का भी अन्तर्भाव हो ही जाता है। क्योंकि ईश्वर तो सामान्य पुरुषों से भिन्न है, अर्थात् पुरुष विशेष है। महर्षि दयानन्द ने विशेषरूप से वेद ईश्वरोक्त हैं या ईश्वरीय ज्ञान हैं, इसी प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है।[4] उन्होंने वेद ईश्वरकृत हैं इस विषय में वेद आदि के अनेक प्रमाण दिखलाये हैं। उन्होंने प्रथमतः चारों वेदों के उन मन्त्राांशों को ही प्रमाणस्वरूप दर्शाया है, जिनमें वेदों को ईश्वरकृत माना गया है।

श्रुति प्रमाण
ट्टग्वेद के पुरुष सूक्त में सृष्ट्युत्पत्ति के वर्णन में कहा गया है–

> तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः ट्टचः सामानि जज्ञिरे।
> छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।[5]

इसकी व्याख्या में दयानन्द जी लिखते हैं–''उसी परब्रह्म से ;ट्टचःद्ध ट्टग्वेद ;यजुःद्ध यजुर्वेद ;सामानिद्ध सामवेद और ;छन्दांसिद्ध इस शब्द से अथर्व भी, यह चारों वेद उत्पन्न हुए।[6]
इसी प्रकार– 'यस्मादृचो अपातक्षन्'[7] इत्यादि अथर्ववेद के मन्त्रा की व्याख्या में वे कहते हैं–''जो सर्वशक्तिमान परमेश्वर है उसी से ट्टग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ये चारों उत्पन्न हुए हैं। ई प्रकार रूपकालघड्ढार से वेदों की उत्पत्ति का प्रकाश ईश्वर करता है कि –अथर्ववेद मेरे मुख के समतुल्य, समावेद लोगों के समान यजुर्वेद हृदय के समान और ट्टग्वेद प्राण नाईं हैं।[8]

स्वयंभूर्याथातथ्यतोर्(र्थान् व्यदधच्छाश्वतीभ्यः समाभ्य
इस मन्त्राांश की व्याख्या करते हुए स्वामी दयानन्द कहते हैं– ''यद यदा सृष्टिं करोति तदा तदा प्रजाभ्यो हितायादिसृष्टौ सर्वविद्यासमन्वितं वेदशास्त्रां स एव भगवानुपदिशति''[9]
जब जब पमेश्वर सृष्टि को रचता है तब तक प्रजा के हित के लिए सृष्टि की आदि में सब विधओं से युक्त वेदों का भी उपदेश करता है।
इसी मन्त्राांश को उ(ृत करके सत्यार्थप्रकाश में कहते है। कि– जो स्वयम्भू सर्वव्यापक, शु(, सनातन, निराकार परमेश्वर है, वह सनातन जीवरूप प्रजा के कल्याणार्थ यथावत् रीतिपूर्वक वेद द्वारा सब विधओं का उपदेश करता है।[10]

वेदों के व्याख्यानरूप ब्राह्मण ग्रन्थ एवं उपनिषदों के प्रमाण
शुक्लयजुर्वेद के ब्राह्मणग्रन्थ शतपथ ब्राह्मण में याज्ञवल्क्य और मैत्रोयी के संवाद में कहा गया है– ''एवं वा अरे(स्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद् यद् ट्टग्वेदो यजुर्वेदः, सामवेदो(थर्वाघिंरसः।[11]

इसकी व्याख्या करते हुए स्वामी जी कहते हैं कि– ''आकाश से भी महान् परमेश्वर से ट्टग्वेदादि चारों वेद निःश्वास के समान सहजरूप में प्रकट हुए हैं, यह जानना चाहिए।''[12]

ट्टषि दयानन्द ने वेदों को ईश्वरोक्त सि(करने के लिए इस संवाद के आवश्यक अंश को ही उ(ृत किया है, शेष अंश को छोड़ दिया है। स्वामी जी के इस कार्य पर प्रतिपक्षियों में आक्षेप किये हैं। किन्तु स्वामी जी ने सभी आक्षेपों का निराकरण करते हुए लिखा है–''विदित हो कि जहां जितने वाक्य के भाग के लिखने की योग्यता हो उतना ही लिखना उचित होता है न अध्कि न न्यून।''[13]

ट्टषि दयानन्द ने महाभाष्य के वाक्य लक्षण को प्रमाणस्वरूप लेते हुए कहा है– ''एकतिघ् वाक्यम्''[14] जिसके साथ एक तिर्घैन्त के प्रयोग का सम्बन्ध् हो वह वाक्य कहाता है।[15]

इस प्रकार शतपथ ब्राह्मण के पूर्वोक्त वचन को वाक्यभेद के द्वारा स्पष्ट करते हैं। श्वेताश्वतरोपनिषद् में भी कहा गया है कि –''यो वै ब्रह्माणं विदधति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै'' ।[16]

जिसने ब्रह्म को उत्पन्न किया है और ब्रह्मादि को सृष्टि के आदि में अग्नि आदि के द्वारा वेदों का भी उपदेश किया है।[17]

इनके अतिरिक्त ब्राह्मण ग्रन्थ तथा उपनिषदों में अनेक ऐसे वचन हैं जिनसे यह स्पष्ट विदित होता है कि वेद ईश्वर के निःश्वास रूप हैं या ईश्वर प्रणीत हैं।

दार्शनिक प्रमाण

दर्शनों में भी कतिपय प्रमाण ऐसे हैं, जिनसे वेदों के अपौरुषयेत्व की सि(होती है। ब्रह्मसूत्रा में व्यासमुनि ने कहा है– शास्त्रयोनित्वात् अर्थात् ट्टग्वेदादि शास्त्रा का आदि कारण ब्रह्मण है। इस सूत्रा के भाष्य में शघङ्कराचार्य ने कहा है– ट्टग्वेदादि शास्त्रा जो अनेक विधओं से पूर्ण हैं, प्रदीप के समान सब सत्य अर्थों को प्रकाशित करने वाले हैं, समस्त ज्ञानमय हैं उनका योनि अर्थात् कारण ब्रह्म है। इस प्रकार के सर्वज्ञ गुण युक्त ट्टग्वेदादि का सर्वज्ञ ;ब्रह्मद्ध से भिन्न दूसरे किसी से होना संभव नहीं है। लोक में यह बात सि(है कि, जो–जो ज्ञान के एक अंश का प्रकाश करने वाला विस्तृत शास्त्रा व्याकरणादि किसी विशेष पुरुष द्वारा रचा जाता है वह विशेष पुरुष उस शास्त्रा से भी अध्कि ज्ञानवान् हुआ करता है।[19]

इस कथन से यह सि(होता है कि सब सत्य विधओं से युक्त जो वेद हैं इनका सर्वज्ञ से ही प्रादुर्भाव हो सकता है। सर्वज्ञ ब्रह्म ही इनका कारण है। इस प्रकार वेदान्त सूत्रा तथा भाष्य आदि में वेदों को अपौरुषेय ;ईश्वरकृतद्ध माना गया है।

वैशेषिक सूत्रा में आता है– 'तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाणयम्'[20] ट्टषि दयानन्द के अनुसार इसका अर्थ है– ''तद्वचनात्=तयोर्ध्मेश्वरयोर्वचनाद् ध्र्मस्यैव कर्त्तव्यतया प्रतिपादनाद् ईश्वरेणैवोक्तत्वाच्च आम्न्यायस्य वेदचतुष्ट्यरूस प्रामाण्यम्– ध्र्म और ईश्वर का वचन होने से अथवा कर्त्तव्यरूप में ध्र्म का प्रतिपादन करने के कारण तथा ईश्वरोक्त होने के कारण चारों वेदों का प्रामाण्य है।[21]

यहाँ 'तद्' शब्द के अर्थ में व्याख्याकारों का विवाद है। कुछ व्याख्याकारों के अनुसार 'तद' का अर्थ 'ध्र्म' है[22] और अन्यों के अनुसार इस शब्द का अर्थ ईश्वर है।[23] स्वामी जी ने 'तद्' शब्द से दोनों अर्थों का ग्रहण किया है। यहाँ

न्यायशास्त्रा में – ''मन्त्राायुर्वेद प्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यम् आप्तप्रामाण्यात्।''[24]

इस सूत्रा में आप्त वचन होने से शब्द का प्रामाण्य स्वीकार किया गया है। इसी सूत्रा की व्याख्या के सन्दर्भ में दयानन्द कहते है।–''सर्वथा{{प्तेनेश्वरेणोक्तानां वेदानाम् = परम आप्त ईश्वर द्वारा उपदिष्ट वेदों का।[25]

इससे स्पष्ट है कि ईश्वरोक्त हैं। न्यायसम्प्रदाय के व्याख्याकारों ने भी एकमत से स्वीकार किया है कि वेद अपौरुषेय हैं।[26]

योगसूत्रा में ईश्वर के स्वरूप आदि का वर्णन करके कहा गया है–

''स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।

इसको उ(ृत करके स्वामी दयानन्द कहते हैं–''जो प्राचीन–अग्नि, वायु, आदित्य, अर्ध्रिा, और ब्रह्मादि पुरुष सृष्टि के आदि में उत्पन्न हुए थ। उनसे लेके हम लोग पर्यन्त और हमसे आगे जो होने वाले हैं, इन सबका गुरु परमेश्वर ही है, क्योंकि वेद द्वारा सत्य अर्थों का उपदेश करने से परमेश्वर का नाम गुरु है।[27]

निष्कर्ष

ट्टषि दयानन्द ने उपर्युक्त वचनों में से कतिपय वचनों को ट्टग्वेदादि भाष्य भूमिका के वेदनित्यत्व के सन्दर्भ में उ(ृत किया है। इसी प्रकार कुछ अन्य वचन भी उनके ग्रन्थों में मिलते हैं। किन्तु इस प्रकार के अन्य अनेक वचन भारतीय वाघ्मय में उपलब्ध् होते हैं जिनसे यह विदित होता है कि अनेक ट्टषि–मुनि तथा विद्वान् इस विषय में एकमत थे कि वेद अपौरुषेय हैं। उनमें कतिपय ट्टषि–मुनियों ने यह भी बतलाया था कि ईश्वर ने अग्नि आदि ट्टषियों पर इस ज्ञान का प्रकाश किया।

सन्दर्भ

1. भामती टीका 1.1.3
2. वही, 1.1.3
3. वही, 1.1.3
4. ईश्वरोक्तत्वाच्चत्वारो वेदाः स्वतः प्रमाणम् ;ट्टग्वेदादिभाष्य भूमिका– ग्रन्थ प्रामाण्य, पृ. 601द्ध
5. यजुर्वेद, 31.7
6. ट्टग्वेदादि वेदोत्पत्ति, पृ. 11–12
7. अथर्ववेद– 10.7.20
8. ट्टग्वेदादि. वेदोत्पत्ति, पृ. 12
9. ट्टग्वेदादि. वेदनित्यत्व, पृ. 41
10. सत्यार्थप्रकाश समुल्लास– 7– पृ. 261–295
11. शतपथ– 14.5.4.10
12. ट्टग्वेदादि. वेदोत्पत्ति– पृ. 11
13. भ्रमोच्छेदन– दयानन्दीय लघुग्रन्थसंग्रह, पृ. 248
14. महाभाष्य – 2.1.1
15. भ्रमोच्छेदन दयानन्दीय लघुग्रन्थ संग्रह, पृ. 249–250
16. श्वेताश्वतरोपनिषद् 6.18
17. ट्टग्वेदादि. वेदोत्पत्ति, पृ. 21–22
18. ब्रह्मसूत्रा – 1.1.3
19. ट्टग्वेदादि. वेदनियत्यत्व– पृ. 39
20. वैशेषिक सूत्रा – 1.1.3
21. द्रष्टव्य– ट्टग्वेदादि वेदनित्यत्व, पृ. 36
22. वैशेषिक सूत्रोपस्कार– 1.1.3
23. वही, 1.1.3
24. न्यायसूत्रा – 2.1.67
25. ट्टग्वेदादि वेदनित्यत्व, पृ. 37
26. तर्कभाषा– शब्दप्रमाण
27. ट्टग्वेदादि वेदनित्यत्व– पृ. 38